शोध मंथन Vol. XII No.IV Oct.-Dec. 2021 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

प्रेमचंद का उपन्यास साहित्यः भारतीय जन–जीवन का दर्पण

प्राप्तिः14.11.2021
स्वीकृतः 28.12.2021

डॉ० सुनीता देवी
सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
के०वी०ऐ० डी.ए.वी. कॉलेज फॉर वूमैन,
करनाल (हरियाणा)
ईमेलः *sunitasalaria1210@gmail.com*

सारांश

प्रेमचंद के उपन्यासों में भारतीय गाँवों और नगरों के रहन–सहन, रीति–रिवाज, अंधविश्वास, परम्पराओं, मान्यताओं, जाति–धर्म आदि का विस्तष्त वर्णन मिलता है। गोदान का होरी उम्र भर अपने बच्चों के लिए दूध देने वाली गाय नहीं खरीद पाया परन्तु मरते समय गोदान करना अनिवार्य है। कर्मभूमि उपन्यास में गांधीवादी विचारधारा और स्वतन्त्रता आन्दोलनों के प्रभाव स्वरूप छुआछूत का विरोध किया गया और बुनियादी शिक्षा के प्रचार–प्रसार पर बल दिया। सेवा सदन में वेश्यावषति, दहेज–प्रथा के साथ–साथ समाज में व्याप्त उपन्यास में विधवा माँ की मजबूरी दहेज प्रथा, अनमेल विवाह, संयुक्त परिवार का बिखराव आदि को उजागर किया गया है। इसी प्रकार गबन, प्रेमाश्रम, मंगलसूत्र आदि उपन्यासों में भी भारतीय जन–जीवन के साक्षात् चित्र दिखाई पड़ते हैं। उनके लगभग सभी उपन्यासों में आदर्शोन्मुख यथार्थवाद का समावेश दिखाई पड़ता है। अतः प्रेमचंद का साहित्य भारतीय जन–जीवन का दर्पण है।

मुख्य शब्दः प्रेमचंद, उपन्यास, साहित्य, भारतीय जन–जीवन, भारतीय संस्कृति, समाज।

उपन्यास सम्राट प्रेमचंद का साहित्य इतना विस्तष्त है कि उसमें भारतीय जन–जीवन का कोई भी अंश अछूता नहीं है। उन्होंने गाँव और नगर के समाज के सभी वर्गों की स्थितियों, रहन–सहन, संस्कृति, पारिवारिक जन–जीवन को अपने साहित्य में उकेरा है। यदि आप वास्तव में तत्कालीन भारतीय जन–जीवन को जानना और समझना चाहते हैं तो प्रेमचंद का कथा–साहित्य इसका पूर्णतः दर्शन कराने में सक्षम है। इसी संदर्भ में डॉ॰ इंद्रकुमार सिन्हा ने लिखा है – 'प्रेमचंद ने अपने उपन्यास और कहानियों में तत्कालीन समाज का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है। सामाजिक जीवन की रूढ़ियों और पाखण्डों का विरोध और समाज सुधार किया है एवम् तत्कालीन सामाजिक जीवन की समस्याओं का उद्घाटन करते हुए नवीन सामाजिक मूल्यों एवम् सांस्कृतिक प्रतिमानों को प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया है। उनका महत्त्व आज भी बना हुआ है। शायद इसका कारण है

उनकी सूक्ष्म दर्षष्टि, जिससे मानव जगत का ऐसा कोई कोना या क्षेत्र शेष नहीं रहा, जिस ओर उन्होंने देखा न हो। कृ जहाँ उन्होंने किसानों की विषम परिस्थितियों का विवेचन किया है, वहाँ जमींदारों, अफसरों और धनी व्यक्तियों की झूठी शान का स्वरूप प्रस्तुत किया है। राजा–महाराजा, जमींदार–तहसीलदार, सेठ–साहूकार, किसान–भिखारी, मज़दूर–खेत मज़दूर, डॉक्टर–प्रोफेसर, वकील–जज, लेखक–पत्रकार, छात्र–अध्यापक, नीतिज्ञ– समाजसेवी, पुलिस–दरोगा, पंडित–महाजन, कारिंदा– पटवारी, चपरासी–अर्दली–तमाम वर्ग के लोग उनकी कथाकृतियों में विराजमान हैं। उनका रचना–संसार एक विशाल समुद्र की तरह है जिसका एक चुल्लू पानी पीकर उसके खारे स्वाद का वर्णन तो किया जा सकता है, पर उसकी गहराई नहीं मापी जा सकती।''[1]

'गोदान' उपन्यास का प्रमुख पात्र होरी तत्कालीन भारतीय किसान का प्रतिनिधि है। जिसका सारा जीवन किसान बने रहने की झूठी मर्यादा निभाने के लिए संघर्ष करता रहा। जात–मर्यादा की झूठी शान और पंचों के कुचक्र में फँसकर तथा साहूकार, महाजन, जमींदार द्वारा शोषित होने के कारण वह असमय ही मौत का ग्रास बन जाता है। लगान, जुर्माना, बेदखली, बेटी की शादी में दहेज देना, सगे भाइयों द्वारा धोखा–बेईमानी, जवान बेटे की बेरोजगारी – इन सब कारणों से एक सामान्य किसान होरी गरीब से गरीब होकर मजदूर बन जाता है। जब होरी का बेटा गोबर पास के गाँव के अहीर भोला की बेटी झुनिया से सम्बन्ध स्थापित कर लेता है और वह गर्भवती हो जाती है। गोबर जात–बिरादरी एवं पंचायत के डर से उसे अपने घर पर छोड़कर स्वयं शहर भाग जाता है तो गाँव में यह खबर आग की भाँति फैल जाती है। बस यहीं से होरी के जीवन की विपत्ति शुरू हो जाती है। गाँव के पंचों, दातादीन, नोखेराम, झिंगुरी सिंह, पटेश्वरी – सबको होरी को परेशान करने का अवसर मिल जाता है। पंचायत बुलाकर होरी पर 100 रुपये (तावाने) और 30 मन अनाज अदा करने का जुर्माना लगा दिया जाता है। जुर्माना न अदा किए जाने की स्थिति में उसे बिरादरी से बाहर किए जाने के डर से जुर्माना (डांड) देने को तैयार हो जाता है। उसकी पत्नी धनिया के बार–बार मना करने पर भी ''होरी देर रात तक खलिहान से अनाज ढो–ढो कर झिंगुरी सिंह की चौपाल में देर करता रहा। बीस मन जौंधा, पाँच मन गेहूँ, इतना ही मटर, थोड़ा सा चना और तिलहन भी था। इस अनाज को लेकर उनकी काफी योजनाएं थीं कि गेहूँ और तिलहन से लगान की सारी किश्त अदा हो जाएगी और हो सके तो थोड़ा सा सूद भी दे देंगे। जौं खाने में काम आएगा। इस तरह पाँच–छह महीने निकल जाएंगे, जब तक ज्वार, मक्का, साँवा और धान के दिन आ जाएंगे लेकिन उनकी सारी योजनाएँ और आशाएं मिट्टी में मिल गई और अब तो भोजन का कहीं ठिकाना नहीं।''[2] इन पंक्तियों में प्रेमचंद ने तत्कालीन भारतीय किसान की अशिक्षा के कारण महाजन, जमींदार और साहूकार द्वारा शोषण किए जाने का यथार्थ चित्रण किया है।

गोदान ही नहीं, प्रेमचंद के अन्य उपन्यासों के किसान भी प्रमुखतः जमींदारों से पीड़ित हैं। समय पर लगान चुकाना ही उनके जीवन की सबसे बड़ी समस्या है। इसी सन्दर्भ में प्रेमचंद ने 'कर्म–भूमि' उपन्यास में लिखा है – ''कितना अन्याय है कि जो बेचारे रोटियों के मोहताज हों, जिनके

पास तन ढकने के केवल चीथड़े हों, जो बीमारी में एक पैसे की दवा भी न कर सकते हों, जिनके घरों में दीपक भी न जलते हों, जो ईंधन के लिए घर में गोबर चुनते फिरें, उनसे पूरा लगान वसूल करना मानो उनके मुँह से रोटी का टुकड़ा छीन लेना है, उनकी रक्तहीन देह से खून चूसना है।''[3]

प्रेमचंद स्त्री शिक्षा के समर्थक रहे हैं। वे स्त्री के सर्वांगीण विकास के लिए उसे पूर्णतः शिक्षित देखने के अभिलाषी हैं। 'गबन' उपन्यास में पं॰ इंद्र भूषण ने स्वीकार किया है – ''जब तक स्त्रियों की शिक्षा का काफ़ी प्रचार नहीं होगा, हमारा कभी उद्धार नहीं होगा।''[4] प्रेमचंद का मानना है कि स्त्रियों को सुशिक्षित और विवाहित रह कर नौकरी कर आर्थिक रूप से आत्म निर्भर होना भी अनिवार्य है। 'प्रतिज्ञा' उपन्यास में प्रेमचंद ने प्रोफेसर दीनानाथ से कहलवाया है – ''मैंने कभी अविवाहित जीवन को आदर्श नहीं समझा। वह आदर्श हो ही कैसे सकता है? अस्वाभाविक वस्तु कभी आदर्श हो ही नहीं सकती है।'' प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों में विवाह योग्य नारी को जीवन भर अविवाहित रूप में चित्रित नहीं किया। मिस मालती, मिस पद्मा आदि नारियों ने जीवन भर विवाह न करने का विचार तो किया, परन्तु वे अंत तक अपने इस विचार पर अडिग न रह पाई। प्रेमचंद ने जीवन में विकास के लिए दांपत्य–जीवन को अनिवार्य माना है।

प्रेमचंद के उपन्यासों में अनमेल विवाह को समाज के लिए घातक बताया है। गोदान के होरी को अपनी बेटी की शादी अधेड़ उम्र के पुरुष से करने की ग्लानि है। 'सेवासदन' उपन्यास की सुमन 'प्रतिज्ञा' उपन्यास की सुमित्रा, 'निर्मला' उपन्यास की निर्मला आदि ऐसी नारी पात्र हैं जिनका विवाह उनके माता–पिता, सगे संबंधियों द्वारा आर्थिक अभाव या लालच के कारण अधेड़ उम्र के पुरुष के साथ कर दिया गया। इससे ज्ञात होता है कि विवाह के समय बेटी की इच्छा–अनिच्छा की उसके माता–पिता और सगे–संबंधियों को कोई परवाह नहीं होती थी। मजबूरीवश उन्हें अनमेल विवाह करना पड़ता था।

प्रेमचंद के उपन्यासों में दमित, शोषित, उत्पीड़ित मध्यमवर्गीय नारी का चित्रण है। वह अपने पति की मानसिक कुण्ठाओं की शिकार बनकर रह जाती है – ''यह सारा संवाद केवल इसलिए है कि मैं अपना दुख भूल जाऊँ। आखिर अब भाग्य तो बदल सकता नहीं। इस बेचारे को क्यों जलाऊँ।''[5]

'गोदान' उपन्यास की धनिया अन्याय का विरोध करती है। परन्तु अपने पति की अनपढ़ता, भोलापन, अंधविश्वास, पैतष्कवाद और महाजनी सभ्यता के आवरण में डूबकर रह जाती है। दूसरी ओर नगरीय जीवन में पली–बढ़ी मालती आधुनिक नारी है। वह आर्थिक रूप से समष्द्ध और आत्मनिर्भर है। वह पुरुषों की संगति में लज्जा का अनुभव नहीं करती। प्रेमचंद ने लिखा है – ''वह बाहर से तितली और भीतर से मधुमक्खी कृ।''[6]

प्रेमचंद स्त्री–शिक्षा के सामर्थक थे, लेकिन भारतीयता को खोकर शिक्षा प्राप्ति के विरोधी थे। वे पाश्चात्य शिक्षा को स्त्रियों के लिए उचित नहीं मानते थे। उनके अनुसार पाश्चात्य शिक्षा

सदाचार की भावना को कम कर भौतिकता और विलासिता बढ़ाती है। 'गोदान' की स्त्री पात्र मिस मालती के चरित्र–चित्रण में प्रेमचंद ने इसी विचारधारा को उजागर किया है – ''दूसरी महिला जो ऊँची एड़ी का जूता पहने हुए है और उनकी मुख–छवि पर हँसी फूटी पड़ती है, मिस मालती है। आप इगलैंड से डाक्टरी पढ़ कर आयी हैं और अब प्रैक्टिस करती हैं। कृ आप नवयुग की साक्षात् प्रतिमा हैं। गात कोमल, पर चपलता कूट–कूट कर भरी हुई। झिझक या संकोच का कहीं नाम नहीं, मेकअप में प्रवीण, बला की हाजिर–जवाब, पुरुष मनोविज्ञान की अच्छी जानकार, आमोद–प्रमोद को जीवन का तत्त्व समझने वाली, लुभाने और रिझाने की कला में निपुण। जहाँ आत्मा का स्थान है, वहाँ प्रदर्शन; जहाँ हृदय का स्थान है, वहाँ हाव–भाव।''[7]

यद्यपि भारतीय जन–जीवन में पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव दिखने लगा था परन्तु मध्यवर्गीय स्त्रियाँ इसके मुक्त थी तथा अपने परम्परागत संस्कारों को स्वीकारती थीं। 'निर्मला' उपन्यास में जब निर्मला अपनी छोटी बहन के विवाह के लिए अपनी माँ को कुछ रुपए भेजती है तो उसकी माँ इसे लेना अपने संस्कारों के विरुद्ध मानती है और निर्मला को कहती है – ''यह बता कि तूने यहाँ रुपए क्यों भेजे थे? मैंने तो तुझसे कभी न माँगे थे। लाख गई–गुजरी हूँ, लेकिन बेटी का धन खाने की नियत नहीं।''[8]

प्रेमचंद के उपन्यासों में राष्ट्रीय चेतना भी उजागर हुई है। कर्मभूमि और गोदान में तो प्रेमचंद ने प्रमुखता से देश–प्रेम की भावना का समावेश किया है। 'गोदान' उपन्यास में चुनावों का वर्णन मिलता है। लोगों में चुनाव से कई महीनों पहले ही विचार–विमर्श आरम्भ हो जाता है। जनता के चुनाव अधिकार नगरपालिका चुनाव तक ही सीमित थे। 'गोदान' के मिस्टर तंखा और निर्जा खुर्शेद शिकार के लिए जंगल में घूमते हुए चनुावों की चर्चा करते हैं। मिस्टर तंखा कहते हैं – ''अब की चुनाव में बड़े–बड़े गुल खिलेंगे। आपके लिए भी मुश्किल है। उत्तर में निर्जा खुर्शेद कहते हैं – ''अब की मैं खड़ा ही न हूँगा। मुफ्त की बक–बक कौन करे। फायदा ही क्या? अब इस डेमोक्रैसी में भक्ति नहीं रही। जरा–सा काम और महीनों की बहस।''[9]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्रेमचंद का साहित्य भारतीय जन–जीवन का, समाज का दर्पण है। तत्कालीन ग्रामीण जन–जीवन में व्याप्त अनपढ़ता, अंधविश्वास, कुरीतियों के कारण तथा जमींदारों, महाजनों के शोषण और सामान्य किसानों के जमीन अधिग्रहण आदि का यथार्थ चित्रण अपने उपन्यासों में किया है। तत्कालीन समाज में व्याप्त सामाजिक बुराइयों – अनमेल विवाह, दहेज प्रथा, वेश्यावृति, रिश्वतखोरी, पुलिस का आतंक, आपसी ईर्ष्या–द्वेष आदि का विस्तृत वर्णन उनके साहित्य में मिलता है। यदि तत्कालीन भारतीय समाज और जन–जीवन को भली प्रकार से जानना–समझना है तो प्रेमचंद का उपन्यास साहित्य इसके लिए पर्याप्त है। अतः प्रेमचंद के उपन्यास साहित्य को भारतीय जन–जीवन का दर्पण कहना बिल्कुल उपयुक्त है।

संदर्भ

1. डॉ॰ रमेश कुंतल मेघ (सं॰), प्रेमचंद हमिारे समकालीन पृ० 64
2. प्रेमचंद, गोदान, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1936, पृ० 108
3. प्रेमचंद, कर्मभूमि, भारती भाषा प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1987, पृ० 360
4. प्रेमचंद, गबन, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 1971, पृ० 180
5. प्रेमचंद, निर्मला, भारती भाषा प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1987, पृ० 71
6. प्रेमचंद, गोदान, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद, पृ० 165
7. वही, पृ० 49
8. प्रेमचंद, निर्मला, भारती भाषा प्रकाशन, शाहदराख दिल्ली, प्रथम संस्करण 1987, पृ० 178
9. प्रेमचंद, गोदान, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद, पृ० 99